Year-8; Sept. 2017
ISSN–2231-1130
UGC Sr. No. – 48398
VEETHIKA

ग्रामीण शक्ति संरचना में दलगत राजनीति का प्रभाव

(बाराबंकी जनपद के त्रिवेदीगंज विकास खण्ड के सर्वेक्षण के आधार पर)

डॉ0 रणजीत*

भारत के अन्तर्गत पंचायती राज व्यवस्था का उद्भव एवं विकास अत्यन्त प्राचीन काल से हुआ है। भारतीय व्यवस्था में इनका महत्वपूर्ण स्थान रहा है, भारत के प्राचीनत उपलब्ध ग्रन्थ ऋग्वेद में 'सभा' एवं 'समिति' के रूप में लोकतांत्रिक स्वायत्तशासी संस्थाओं का उल्लेख मिलता है। इतिहास के विभिन्न अवसरों पर केन्द्र में राजनैतिक उथल–पुथल के बावजूद सत्ता परिवर्तनों से नित्य प्रभावित रहकर भी ग्रामीण स्तर यह स्वायत्तशासी इकाईयाँ पंचायतें आदिकाल से निरन्तर किसी न किसी रूप में कार्यरत रही है।

वैदिक साहित्य में ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की संगठित व्यवस्था के कुछ सन्दर्भ मिलते हैं। उस समय 'ग्राम' प्रशासन की सबसे छोटी इकाई थी जिसका मुखिया ग्रामीण कहलाता था। ग्राम से विष, विष से जन तथा जन से मिलकर राष्ट्र का निर्माण होता था। ऋग्वेद में सभा का उल्लेख मिलता है। इसमें कक्ष को सभा, प्रमुख को सभासद एवं सभा के योग्य व्यक्ति को समेय कहा गया है। उस समय कृषि एवं पशुपालन इनके प्रमुख व्यवसाय थे, इस कारण ग्रामों का नगरों की अपेक्षा अधिक महत्व था तथा आने जाने के साधन सुगम नहीं थे इसलिये प्रत्येक ग्राम स्वावलम्बी होता था। रामायण तथा महाभारत के काल में 'सभा' छोटे राज्यों का उल्लेख मिलता है, रामायण में जनपदों को ग्रामीण गणराज्यों के संघों के रूप में जाना जाता था। स्मृति काल में मनुस्मृति में उल्लेख है कि राष्ट्र में राजा प्रजा पर शासन करता है। 'ग्रामीक' ग्रामीण शासन के लिये उत्तरदायी होता था। इसका प्रमुख कार्य ग्रामवासियों से कर एकत्रित करना तथा ग्राम में शान्ति व्यवस्था बनाये रखना था। मौर्य काल में प्रचलित कौटिल्य के अर्थशास्त्र में ग्रामीण प्रशासन व्यवस्था का वर्णन मिलता है। गुप्तकाल में स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था मौर्यकाल के समान ही रही। मुगलकाल में पंचायती राज में भी प्रत्येक गाँव की एक सभा होती थी जो अपने क्षेत्र में शासन का सम्पूर्ण कार्य संभालती थी। ब्रिटिश काल में पंचायती राज आज के स्थानीय स्वशासन को ब्रिटिश शासन की देन कहा जा सकता है, क्योंकि प्राचीन भारत की पंचायतों एवं वर्तमान पंचायती राज व्यवस्था में मूल–भूत अन्तर है। 1935 में भारत शासन अधिनियम के द्वारा प्रान्तीय स्वायत्ता की शुरूआत हुई। इसके फलस्वरूप देश में स्वतन्त्रता की दिशा में एक शक्तिशाली पहल हुई, जिसका स्थानीय संस्थाओं पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा।

स्वतंत्र भारत में पंचायत राज–स्वतन्त्रता पारित के पश्चात लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एवं स्थानीय स्वशासन की दिशा में एक नयी शुरूआत हुई। 26 जनवरी 1950 को भारत का संविधान लागू हुआ। संविधान में पंचायती राज को नीति निर्देशक तत्वों में स्थान दिया गया। संविधान के अनु0 40 में प्रावधान है कि राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन इस प्रकार करने के लिये बाध्य होगा। जिससे वे स्थानीय स्वशासन की इकाई के रूप में कार्य कर सकें। भारत में सर्वप्रथम 1947 में उत्तर प्रदेश राज्य ने ग्राम पंचायतों के विकास हेतु एक अधिनियम पारित किया। इस अधिनियम के अन्तर्गत 1948 में ग्राम पंचायतों के चुनाव भी सम्पन्न हुये।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में पहला प्रयास सामुदायिक विकास कार्यक्रम का शुभारम्भ था। जो गाँधी जयंती 2 अक्टूबर 1952 से शुरू किया गया। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य 'अधिकतम लोगों का अधिकतम कल्याण' करना था एवं प्रशासन का दायित्व नौकरशाही को ही सौंपा गया, किन्तु विद्यमान संगठनात्मक ढांचे में हेर–फेर कर दिया गया था। इस सम्बन्ध में रजनी कोठारी का मत है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम नौकरशाही द्वारा संचालित होने के कारण विफल हो गये क्योंकि इसमें स्थानीय लोगों को भागीदार नहीं बनाया गया, जबकि स्थानीय समस्याओं का ज्ञान स्थानीय लोगों को अधिक होता है। एवम् उनके समाधान के उपाय

* असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र, दयानन्द बछरावाँ पी0जी0 कॉलेज, बछरावाँ, रायबरेली।

भी वही लोग कर सकते हैं। लेकिन इस सामुदायिक विकास कार्यक्रम में सरकारी मशीनरी के जरिये गाँव के लोगों की मनोवृत्ति बदलने की आशा की गयी, परिणाम यह निकला कि गाँवों की उन्नति स्वयं करने की अपेक्षा ग्रामीण जनता सरकार का इन्तजार करती रही।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के प्रभावी रूप न ग्रहणकर पाने के कारण 1957 में गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन इस कार्यक्रम की समीक्षा हेतु किया गया। समिति ने अपने प्रतिवेदन में सामुदायिक विकास कार्यक्रम की असफलता का कारण लोकप्रिय नेतृत्व का अभाव बताया बल्कि समिति ने यह महसूस किया कि गाँवों में लोकतंत्र की स्थापना के लिये सच्चे अर्थों में सत्ता का विकेन्द्रीकरण होना चाहिये। समिति ने लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण पर आधारित त्रिस्तरीय पंचायती राज स्थापित करने की सिफारिश की ये तीन स्तर निम्नलिखित हैंः –

1. ग्राँव स्तर पर ग्राम पंचायत
2. क्षेत्र स्तर पर क्षेत्र पंचायत
3. जिला स्तर पर जिला पंचायत

साथ ही इस त्रिस्तरीय पंचायती राज की सफलता के तीन बिन्दुओं को आवश्यक माना। सत्ता का विकेन्द्रीयकरण इकाईयों को विकास के लिये पर्याप्त साधन प्रदान करना एवं कर्तव्य की समक्ष हेतु प्रशिक्षण–व्यवस्था करना। राष्ट्रीय विकास परिषद ने समिति की सिफारिशों को अनुमोदित करने के साथ ही सुझाव भी दिया कि प्रत्येक राज्य को ऐसी पंचायत राज व्यवस्था का विकास करना चाहिए। मेहता समिति के अनुसार पंचायती राज व्यवस्था का 2 अक्टूबर, 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में शुभारम्भ किया गया एवं आगामी 2–3 वर्षों में देश के अधिकांश भागों में पंचायती राज व्यवस्था लागू कर दी गयी। केन्द्र में तत्कालीन नेतृत्व के आधीन राज्य सरकारों ने पंचायती राज को मजबूत करने का प्रयास किया फिर भी यह उत्साह 5 वर्ष तक ही रहा इसके बाद ठहराव का चरण आया।

अशोक मेहता समिति (1977) में राष्ट्रीय स्तर पर प्रथम बार कांग्रेस के स्थान पर गठित जनता पार्टी की सरकार स्थानीय स्तर के निकायों की शक्तियां एवं कार्यों का विकेन्द्रीकरण करने की इच्छुक थी इसलिए उसने दिसम्बर 1977 में अशोक मेहता की अध्यक्षता में 13 सदस्यीय पंचायती राज आयोग की नियुक्ति इस उद्देश्य से की गयी कि आयोग पंचायती राज को सार्थक या कल्याणकारी राज संस्थाओं का अध्ययन कर आवश्यक दिशा–निर्देश प्रदान कर सके।

जी0बी0 के राव समिति (1985) ग्रामीण पिछड़ापन एवं निर्धनता को दूर करने तथा ग्रामीण स्थानीय शासन के पुर्नगठन के तरीके सुझाने हेतु तत्कालीन केन्द्र सरकार ने 1985 में जी0वी0के0 राव की अध्यक्षता में एक समिति गठित की जिसके तहत सामाजिक न्याय और आर्थिक विकास की जिम्मेदारी केवल नौकरशाही पर नहीं होनी चाहिये। बल्कि स्थानीय लोगों व उनके प्रतिनिधियों को ग्रामीण रूप से सहभागी बनाया जाये। भारत में पंचायती राज की विकास यात्रा के रूप में 1986 में सिंधवी समिति भी प्रमुख कड़ी थी। अपने प्रतिवेदन में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की वृद्धि और विकास पर दृष्टिपात करने के पश्चात सिंधवी समिति ने ग्राम सभा को जीवित किया। जिसमें ग्राम पंचायत के सभी मतदाता शामिल हों तथा इसे प्रत्यक्ष प्रजातंत्र के अवतार की संज्ञा दी। समिति ने गाँव के लोगों को न्याय पंचायत की स्थापना का भी सुझाव दिया तथा पंचायतों की आर्थिक रूप से सक्षम बनाने हेतु अधिकाधिक वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराने की बात कही। उपरोक्त गठित समितियों को सुझाव बहुत व्यवहारिक एवं लोकतंत्र की मूल भावना के अनुरूप थे, लेकिन दुर्भाग्य से इन समितियों की सिफारिशें मात्र कागजी बनकर ही रह गयी। कुछ राज्यों को छोड़कर अन्य राज्यों ने न तो इन संस्थाओं के नियमित चुनाव कराये और न ही प्रशासनिक शक्तियाँ प्रदान की।

1989 में राजीव गाँधी सरकार ने 64वाँ संविधान संशोधन विधेयक संसद के सम्मुख प्रस्तुत किया, किन्तु अनेक राजनीतिक कारणों से संशोधन विधेयक पारित नहीं हो सका। पी0वी0 नरसिम्हाराव सरकार ने राजीव गाँधी सरकार द्वारा तैयार

पंचायती राज संस्थाओं से सम्बन्धित विधेयक में कुछ संशोधन कर 16 दिसम्बर 1991 को 72वाँ संविधान संशोधन के रूप में लोक सभा में पेश किया। विधेयक को संयुक्त संसदीय समिति को सौंपा गया। समिति ने अपनी सम्मति जुलाई 1992 में दी तथा विधेयक के क्रमांक को परिवर्तित कर 73वाँ संविधान संशोधन कर दिया, जिसे 22 दिसम्बर 1992 को लोक सभा ने तथा 23 दिसम्बर 1992 को राज्यसभा ने पारित कर दिया। राष्ट्रपति द्वारा 20 अप्रैल 1993 को इस विधेयक पर अपनी स्वीकृत प्रदान की गयी तथा इसे 25 अप्रैल 1993 को लागू किया गया। इस संशोधन द्वारा संविधान के पूर्ववर्ती भाग 8 के पश्चात 9 जोड़ा गया है जिसका शीर्षक 'पंचायत' है। इसके द्वारा अनुच्छेद 243 में पंचायतों से सम्बन्धित प्रावधान किये गये हैं। जिसमें 15 अनुच्छेद हैं। इस अधिनियम के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित हैः –

1. ग्राम सभा एक ऐसा निकाय होगी जिसमें ग्राम स्तर पर पंचायत क्षेत्र में मतदाताओं के रूप में पंजीकृत सभी व्यक्ति शामिल होंगे। ग्रामसभा राज्य विधान मण्डल द्वारा निर्धारित शक्तियों का प्रयोग तथा कार्यों को सम्पन्न करेगी।
2. प्रत्येक राज्य में मध्यवर्ती जिला स्तर पर पंचायतों का गठन किया जायेगा।
3. राज्य विधान मण्डल द्वारा निर्मित विधि के प्रावधानों के अनुरूप पंचायतों का गठन किया जायेगा।

प्रत्येक पंचायत के सदस्यों का निर्वाचन प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रक्रिया द्वारा होगा, जिसमें सम्पूर्ण पंचायत क्षेत्र को उतने ही निर्वाचन क्षेत्रों में विभक्त किया जायेगा, जितने सदस्य उस क्षेत्र में निर्वाचित किये जायेंगे, पंचायत के सदस्यों की संख्या का निर्धारण जनसंख्या के अनुपात में किया जायेगा। राज्य विधान मण्डल विधि द्वारा ग्राम पंचायतों के न होने पर जिला स्तरीय पंचायतों में प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करेगा तथा इसी प्रकार मध्यवर्ती पंचायतों के प्रमुखों का जिला स्तरीय पंचायतों में प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करेगा। प्रत्येक ग्राम पंचायत में अनु0जाति, अनु0जनजाति के लिये सीटें आरक्षित होंगी। ये सीटें पंचायत में उनकी जनसंख्या के अनुपात में निर्धारित की जायेंगी। ये सीटें एक पंचायत में चक्रानुक्रम से विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों में आरक्षित की जायेंगी एवं अनारक्षित स्थानों में कम से कम एक तिहाई स्थान अनु0जाति/अनु0जनजाति से सम्बन्धित महिलाओं के लिये आरक्षित होंगे। प्रत्येक पंचायत में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले कुछ स्थानों में से न्यूनतम एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित किये जायेंगे ये सीटें चक्रानुक्रम से एक पंचायत के विभिन्न क्षेत्रों में आरक्षित की जायेंगी।

विकास खण्ड त्रिवेदीगंज उ0प्र0 की राजधानी लखनऊ सीमा से 30 किलोमीटर दूर बाराबंकी जनपद में स्थित हैं, जो राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 56 (लखनऊ–सुल्तानपुर) बाराबंकी जनपद से 50 किलोमीटर दूरी एवं लखनऊ से 46 किलोमीटर दूरी पर है। विकास खण्ड त्रिवेदीगंज में 58 ग्राम पंचायते हैं जो लगभग 1,70000 जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है। प्रस्तुत अध्ययन 2008–2009 में किये गये सर्वेक्षण कार्य पर आधारित है। अध्ययन में प्रत्येक ग्राम पंचायत के वर्तमान ग्राम प्रधान का संरचनात्मक अनुसूची के माध्यम से तथ्यों का संकलन किया गया, अध्ययन की उन्मुखता संरचनात्मक प्रकार्यात्मक है। अध्ययन में निम्नलिखित उपकल्पनाओं का परीक्षण किया गया–

1. ग्राम प्रधान चुनाव जीतने के पश्चात किसी दल विशेष की विचारधारा से प्रभावित रहते हैं।
2. ग्राम प्रधान अपनी विचारधारा वाले राजनीतिक दल के कार्यकर्ताओं को नियमों में शिथिलता देकर लाभ पहुँचाते हैं।
3. ग्राम प्रधान भिन्न विचारधारा वाले राजनीतिक दल के कार्यकर्ताओं के विधिक कार्यों में अवरोध उत्पन्न करते हैं।

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैंः–

1. अध्ययन यह परीक्षण करेगा कि ग्राम प्रधान चुनाव जीतने के पश्चात किसी दल विशेष की विचार धारा से प्रभावित रहते हैं।

2. उक्त अध्ययन में इस बात को जानने की कोशिश की जायेगी कि ग्राम प्रधान अपनी विचार धारा वाले राजनीतिक दल के कार्यकर्ताओं को नियमों में शिथिलता कर लाभ पहुँचाते हैं।
3. उक्त शोध पत्र में यह ज्ञात करने की कोशिश की गयी कि ग्राम प्रधान भिन्न विचारधारा वाले राजनीतिक दल के कार्यकर्त्ताओं के विधिक कार्यों में अवरोध उत्पन्न करते हैं।

सामाजिक एकता के स्वरूप की संकल्पना जो गांधी जी ने देखी थी वह पंचायतों में दलीय राजनीति के कारण कसौटी पर खरी नहीं उतर रही है। राजनीति जिसको विकास का एक सशक्त हथियार माना जाता है वहीं गांव में दलगत राजनीति को बढ़ावा देकर वैमनस्य की भावना उत्पन्न कर रहा है। जातिगत समाज होने के कारण चुनाव जीतना ग्रामीण पृष्ठभूमि में अहम मुद्दा बन जाता है जिसके कारण गाँव की राजनीति जातीय प्रतिद्वन्द्विता में सिमट जाती है। विकास के मुद्दे प्रायः गौण हो जाते हैं। ऐसे में यदि दलित, पिछड़े लोगों के उत्थान की बात की जाय तो यह बेईमानी है। महिलाओं की स्थिति में पंचायती राज से जिस सुधार की अपेक्षा की गयी थी उससे उन्हें सत्ता में आने का मौका तो मिला लेकिन निर्णय का अधिकार नहीं मिल पाया। शोध में पाया गया कि पुरूष प्रधान मानसिकता की स्पष्ट छाप पंचायती राज धरातलीय सच्चाई पर देखने को मिलती है वर्तमान में विभिन्न वर्गों की महिलाओं को ग्राम प्रधान अध्यक्ष, क्षेत्र पंचायत (प्रमुख) अध्यक्ष जिला पंचायत जैसे महत्वपूर्ण ओहदों पर बैठा तो दिया परन्तु हमने ऐसे पद पंचायती राज व्यवस्था में बना लिये हैं जो महिलाओं को अपनी क्षमताओं के अनुसार कार्य एवं निर्णय लेने से दूर रख रहे हैं।

आधुनिक राजनीति में राजनीतिक दलों के स्थान केन्द्रीय अवधारणा के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। राजनीतिक दल सामाजिक व्यवस्था परस्पर विरोधीहितों के सारणीकरण, अनुशासन एवं सामंजस्य के प्रमुख साधन रहे हैं। राजनीतिक दलों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि सत्ता के लिये एक आकांक्षी व्यक्ति किस तरह प्रतिस्पर्धा करता है, और किस प्रकार इसको प्राप्त करता है। राजनीतिक दल के नेता अपना जीवन सामाजिक कार्यों तथा राजनीतिक गतिविधियों में अधिक सक्रियता से भाग लेकर प्रारम्भ करते हैं। राजनीतिक दल के सदस्य एक बार प्रमुख पदाधिकारी हो जाते हैं। वे अपने अनुभव योग्यता राजनीतिक दखल से दल के लिये प्रभावशाली हो जाते हैं। प्रमुख पदों से उन्हें हटाया नहीं जा सकता।

परम्परागत राजनीतिक व्यवस्था में राजनेताओं को परम्परा के आधार पर समाज द्वारा स्वीकारा जाता है। राजनीतिक दल जननेताओं को बनाने तथा उन्हें उचित राजनीतिक पद दिलाने का कार्य सम्पन्न करते हैं। नेताओं की चयन प्रक्रिया में मतदाता का विशेष प्रभाव होता है। मतदाताओं के मताधिकार से ही नेताओं को उच्च पदों पर आसीन किया जाता है। जो व्यक्ति विशेष पदों के कार्य–भार सम्भालने के योग्य होते हैं उन्हें दल के सदस्यों द्वारा चुना जाता है। विभिन्न दल वैचारिक दृष्टि से एक दूसरे के भिन्न होते हैं तथा उनके कार्यक्रम एवं नीतियाँ उनकी वैचारिकी के अनुरूप तैयार की जाती हैं। जहाँ दलों में परस्पर प्रतिस्पर्धा हो वहाँ सदस्यों को आकर्षित करने के लिये जनउपयोगी कार्यक्रम तैयार किये जाते हैं। सामाजिक व्यवस्था को स्थापित करने के लिये विशेष आर्थिक एवं सामाजिक कार्यक्रमों के प्रति विश्वास दिखाना एक विचारधारा बन जाती है। विरोधी पक्ष सत्तारूढ़ दल की नीतियों एवं कार्यक्रमों का खण्डन करने का पूर्व प्रावधान होता है। प्रजातंत्र में सत्ता जनता के हाथों में होती है, किन्तु जनता सत्ता पर सीधा नियंत्रण नहीं कर सकती। यह कार्य राजनीतिक दलों के द्वारा सम्पन्न होता है। सत्तारूढ़ दल के विरोध में विरोधी दलों द्वारा सत्ता हथियाने के लिये जनता को अपने नीति और विचारों से अवगत कराना प्रमुख उद्देश्य होता है।

समाज में कई विरोधी समूह अपने हितों को लेकर एक दूसरे से संघर्ष करते हें। राजनीतिक एवं सामाजिक नीतियों को लेकर राजनीतिक दल पर सामंजस्यता स्थापित कर लेते हैं। हिन्दुओं तथा मुस्लिमों का सामुदायिक झगड़ा उच्च तथा निम्न स्तर की जातियों का आपसी तनाव ही विरोधी दलों

की नीतियों एवं विचारों में लाकर सत्तारूढ़ दल का विरोध करते हैं। जिसके कारण विभिन्न समूहों में परस्पर एकीकरण को बढ़ावा मिलता है। व्यक्तियों को जो राजनीतिक सहयोग चुनाव प्रतिस्पर्धा में भाग लेना सिखाया जाता है। उसके लिये राजनीतिक दल महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। निर्दलीय प्रत्याशी चुनाव में सफलता बहुत कम प्राप्त करते हैं। राजनीतिक मूल्यों के प्रति चेतना उत्साह कार्य विभिन्न दल करते हैं। दल के कार्यकर्ता वार्षिक सम्मेलन या अधिवेशन करके सदस्य संख्या में बढ़ोत्तरी करते हैं तथा अपने दल के कार्यक्रम एवं नीतियों को जनता तक पहुँचाते हैं। इससे जनता में समाजीकरण की भावना पैदा होती है।

राजनीतिक दलों का दुष्पार्य है किन्तु इसका अपना महत्व है राजनीतिक प्रतिस्पर्धा के लिये विरोधी दल का होना अतिआवश्यक है। दलों द्वारा अपनी विरोधी नीति बहुत स्पष्ट होती है। राजनीतिक दल का सत्ता में आना तभी सम्भव है जब जनता के हितों के लिये सत्तारूढ़ दल का विरोध करके अपने कार्यक्रम एवं नीतियों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करें, जो सत्तारूढ़ दल का अपदस्त हो जाता है वह विरोध की नीति अपना लेता है। विरोध की नीति से राजनीतिक दल का आन्तरिक संगठन मजबूत हो जाता है। विरोध प्रचार माध्यम हड़ताल सड़क जाम अन्य साधनों से दर्शाया जाता है। जिससे सत्तारूढ़ दल से निकल कर लोग विरोधी दल में शामिल हो जाते हैं। जिसके कारण सत्तारूढ़ दल से अपनी नीतियों एवं कार्यक्रमों को सत्तारूढ़ दल से मनवाने में सफल भी हो जाते हैं। दलों द्वारा राज्य सत्ता एवं जनता के बीच वैध सम्बन्ध स्थापित किये जाते हैं। राजनीतिक दल अन्य सामाजिक समूहों जैसे परिवार चर्च आदि से भिन्नता रखते हैं। राजनीतिक दल का एक प्रमुख लक्ष्य सत्ता प्राप्त करना होता है। राजनीतिक दल एक ऐसा समूह है जो कि अनेक विजातीय हितों को समायोजित करता है। दूसरी ओर दबाव समूह एक समान हित वाले व्यक्तियों तक सीमित होता है, जो कि राजनीतिक दल में नीति निर्णायकों को प्रभावित कर अपने हितों को पूर्ण करने का प्रयास करते हैं। राजनीतिक दल और दबाव समूह राजनीति को प्रभावाति करने की दृष्टि से समान है लेकिन प्रभावित करने का ढंग अलग–अलग है। इन दोनों में प्रकृति भूमिका लक्ष्य एवं कार्यशीलता की दृष्टि से अन्तर है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

1. अध्ययन में पाया गया कि ग्राम प्रधान चुनाव जीतने के पश्चात किसी दल विशेष की विचारधारा से प्रभावित थे। यद्यपि वे इस बात को स्वीकार नहीं करते हैं।
2. निष्कर्ष के रूप में यह भी प्राप्त हुआ कि ग्राम प्रधान एक दल विशेष के कार्यकर्ताओं को संरक्षण देते हैं और लाभ पहुँचाते हैं। आवश्यकता होने पर इसके लिये विधिक प्रक्रियाओं को शिथिल करने का प्रयास करते हैं।
3. अध्ययन में यह भी प्रमाणित हुआ कि ग्राम प्रधान अपने विरोधी और भिन्न विचारधारा वाले राजनीतिक कार्यकर्ताओं के तर्क विधिक कार्यों में यथा सम्भव अवरोध उत्पन्न करते हैं।, देरी करते हैं और उन्हें रोकने का प्रयास करते हैं।
4. निष्कर्षता अध्ययन की उपकल्पनायें सत्यापित हुई।

सन्दर्भ –

1. देसाई, ए0आर0, भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र, रावत पब्लिकेशन, जयपुर एवं नई दिल्ली, 1999।
2. गुप्त एवं शर्मा, ग्रामीण समाजशास्त्र, साहित्य पब्लिकेशन आगरा।
3. अग्रवाल एवं पाण्डे, ग्रामीण समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर प्रा0लि0, आगरा सप्तम संस्करण, 2003।
4. गोयल, सुनील, ग्रामीण समाजशास्त्र, आर0 बी0 एस0 ए0 पब्लिशर्स सवाई मानसिंह हाईवे, जयपुर, 1998।
5. मदान, जी0 आर0 ग्रामीण समाजशास्त्र, एस0चांद एण्ड कम्पनी प्रा0 लि0, राम नगर नई दिल्ली।